का उपयोग इसमें चपलता, तीखापन व पैनापन लाता है। अत्यधिक बोलने का संस्कार मृत्योपरांत भी आत्मा को दुख देता है। शरीर छूट जाने के बाद वाचाल आत्मा, जीभ के अभाव में न बोल पाने पर दुखी हो जाती है। इसके साथ ही अपने बोल द्वारा दूसरों को दिये गये दुख का भी उसे साक्षात्कार होता है। मनुष्य को अपने कर्मों का या तो भुगतान अदा करना पड़ता है या भुगतान प्राप्त करना होता है। गर्भ में जेल जैसा बंधन अनुभव करना भी कर्मों का हिसाब-किताब है। पिछले जीवन में जीभ की भूमिका क्या रही थी, उस पर भी गर्भ-बंधन की महसूसता का प्रतिशत निर्भर करता है। फिर जन्म लेकर वह मनुष्य यदि बुरे कर्म करता है तो स्थूल जेल में पहुँच जाता है। इसका मुख्य कारण कहीं न कहीं जीभ का गलत प्रयोग होना भी है। तो भूल जीभ करती है और बंधन में सारा शरीर आता है। परंतु जीभ का सही उपयोग बंधनमुक्त करने का कारण बनता है, चाहे वह वकील की जीभ हो या प्रत्यक्षदर्शी गवाह की जीभ हो या फिर विरोधी की क्षमा भावना से प्रेरित जीभ हो। एक मनुष्य जो जीभ से बड़े अच्छे सुझाव देता है परंतु इन्हें कर्म में कभी नहीं लाता, वह ऐसे मुर्गे के समान है जो सवेरे बांग देकर मोहल्ले वालों को तो जगा देता है परंतु खुद सो जाता है।

ढाई इंच की जीभ पर निर्भर है ढाई हज़ार साल का भाग्य

ढाई इंच की विनाशी जीभ की सजगता या चपलता से ढाई हज़ार साल का अविनाशी भाग्य बन भी सकता है और बिगड़ भी सकता है। अभी चल रहे अंतिम समय में जीभ ढाई अक्षर प्रेम के धारण करती है या फिर ढाई अक्षर घृणा या द्वेष के, उसी से 'कल्पवृत्त' में आत्मा के भाग्य का निर्धारण होता है। प्रेम या घृणा के व्यक्त शब्द भले ही यहीं रह जाते हैं परंतु उनसे बने व्यक्तित्व को आत्मा साथ ले जाती है। मानव के व्यक्तित्व की पहली झलक चेहरे से मिलती है, दूसरी झलक उसके बोल से मिलती है और तीसरी झलक उसके कर्म से मिलती है। चेहरा उसकी आँखों द्वारा पहचाना जाता है, बोल जीभ द्वारा पहचान पाते हैं और कर्म आचरण से पहचान लिए जाते हैं। एक डॉक्टर भी जब मरीज़ की जाँच करता है तो उसकी आँखों व जीभ का मुआयना करके फिर उसकी जीवन-शैली (कर्म) पर सवाल करता है। निराकार परमपिता शिव भी सुप्रीम रूहानी डॉक्टर के तौर पर मनुष्यों को, आँखों व वाणी को संभालने व आचरण से किसी को भी दुख न पहुँचाने की राय देते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि सुखदाई आचरण भी जीभ के विवेकानुकूल संयम से बनता है।

मौन, जीभ और मन दोनों का

जीभ पर बंधन लगाना मौन कहलाता है। मौन आध्यात्मिक साधना का एक माध्यम है। परंतु मौन, जीभ व मन दोनों का हो, तब ही फायदा मिलता है। जीभ पर बंधन लगाना आसान है परंतु मन को निर्संकल्प करना संभव नहीं है। शारीरिक ज्ञानेन्द्रियाँ मुख के मौन में रहते भी मन से बुलवाती रहती हैं। कानों में जो शब्द या ध्वनि पड़ती रहती है, उसके स्वरूप के अनुरूप मन प्रतिक्रिया में बोलता रहता है। जैसे कि यदि कोई सुरीला गाना सुनाई पड़ता है तो मन में शब्द गूंजते हैं कि 'वाह, गाने वाले का गला कितना मीठा है' और यदि कोई किसी पर चिल्ला रहा है तो मन बोल पड़ता है कि 'क्यों बेकार में गला फाड़ रहा है।' उसी प्रकार नेत्र यदि कोई अच्छा दृश्य देखते हैं तो मन बोल पड़ता है कि 'वाह, अति सुन्दर' और यदि कोई गंदा दृश्य या दुष्ट मनुष्य दिख पड़ता है तो सिर दूसरी तरफ कर लेने पर भी मन में आवाज़ उठती है कि 'सवेरे-सवेरे यह क्या सामने आ गया।' मौनव्रत लिया मनुष्य जब भोजन से स्वाद पाता है तो मन बोल पड़ता है कि 'पता नहीं आज किसने इतना स्वादिष्ट भोजन बनाया है।' यदि कहीं से गुज़रते हुए नाक में खुशबू या बदबू आती है तो मन में फिर उसी अनुरूप